ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 135-137

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

नारी शक्ति के विषय में विवेकानन्द के विचार

1. अवधेश कुमार श्रीवास्तव 2. गरिमा

1. प्राचार्य– शिक्षा संकाय, एस. एस. मेमोरियल बी टी सी ट्रेनिंग कालेज, इटावा (उ0प्र0) भारत

2. शोध अध्येत्री, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर (राजस्थान) भारत

Received- 28.09.2019, Revised- 02.10.2019, Accepted - 06.10.2019 E-mail: nirpendrakumarsinha@gmail.com

सारांश : *वस्तुतः यह आर्यन चिन्तन शैली ही है, जो आज तक हमारे देश की नारियों की पथ प्रदर्शिका रही है। हम आज इकीसवीं सदी में जीते हुए जिस नारी को आगे बढ़ते हुए देखते हैं, पुरुषों के कदम से कदम मिलाकर चलते हुए देखते हैं, उसकी पूर्व भूमिका भारत में आर्य काल में समाज की स्थापनाकाल में ही देखी जा सकती है। आज हमारी दृष्टि जिस प्रकार देश, समाज और विश्व विकास में उनकी बढ़ती सहभागिता पर गर्व करना चाहती हैं। उनके महत्व को स्वीकार कर उन्हें सशक्ति के मार्ग पर देखना चाहती है, वस्तुतः यह युग के साथ चिन्तन में आता हुआ बदलाव किंचित हो सकता है पर यह उपर से थोपा हुआ वैश्विक चिंतन नहीं इसकी जड़ें हमारे अपने प्राचीन समाज में ही देखी जा सकती हैं और अपने प्राचीन आदि साहित्य में इसकी झलक ढूँढी जा सकती है। भारतीय स्त्रियों के व्यक्तित्व पर प्रश्नचिह्न डालने वाले तथाकथित सभ्य और विद्वन् नारी समाज को करीब डेढ़ सौ वर्ष पूर्व ही कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे भाषण देते हुए उनके नकारात्मक स्वरूप से उबार कर उनके लिए मान सम्मान अर्जित करने की स्वामी विवेकानन्द ने चेष्टा की थी। उन्होंने संभवतः सर्वप्रथम उनकी स्थिति को आर्य न जीवन शैली से जोड़ने की कोशिश कर अपने देश में भी उनकी स्वाभाविक प्रतिष्ठा पुनर्प्रतीष्ठित करने की कोशिश की। इसलिए स्वामी की दृष्टि से ही उनकी विगत आगत और संभवतः भविष्य की स्थितियों में झांकने की कोशिश करनी उचित ही होगी।*

कुंजी शब्द – आर्यन, चिन्तन शैली, पथ प्रदर्शिका, स्थापनाकाल, समाज, विश्व विकास, सहभागिता, व्यक्तित्व।

आर्यों का आना कब और किधर से आज भी संशय के घेरे में है पर दक्षिण में फैली या संभवतः सम्पूर्ण भारत में फैली द्रविड़ संस्कृति के पश्चात हमारे समाज को नयी दिशा देती हुई यही सभ्यता रही जोउत्तर भारत की हमारी पुरातन संस्कृति बन गयी। वस्तुतः यह आर्य चिन्तन शैली एक अध्यात्मिक चिन्तन शैली थी जिसने भारतीय समाज को एक विशेष जीवन शैली दी। हर व्यक्ति स्वाभिमानी और स्वतंत्र था। उनके पास अपनी भूमि थी एक ग्रामीण समाज का वे निर्माण करते थे और उसमें अपनी सभी आवश्कताओं की पूर्ति करते थे। धुमंतु प्रकृति होने के पश्चात भी वे जहाँ जहाँ गये इस आर्य शैली के जीवन की स्थापना की। इस बात कीओर ध्यान आकृष्ट करने की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि विवेकानन्द ने अपने उस भाषण में इसे आर्य जीवन की पहली विशेषता बताई।

उनके अनुसार उन्होंने जिस द्वितीय महत्वपूर्ण विचार की उत्तर भारत में आधार शिला रखी वह स्त्री स्वातंर्त्य का भी था। आर्यन साहित्य के अनुसार स्त्रियां तब भी पुरुषों की समकक्षता रखती थीं। किसी अन्य साहित्य में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता।

हमारे प्राचीनतम साहित्य वेदों में, जो निश्चय ही भारत से इतर स्थानों में लिखे गये, उनमें वे प्राचीनतम ऋचाएँ हैं जो देवों की स्तुति में लिखी गयीं। वे अग्नि के लिए, सूर्य के लिए, वरुण, इन्द्र एवम् अन्य देवताओं के लिए होती थीं जिनमे रचना करने वालों के नामों का भी उल्लेख होता था।

ऋग्वेद के दशम मण्डल के दशम अध्याय के 125वें सूक्त की आठ ऋचाओं में अम्भृण ऋषि की कन्या वाक, जिन्हें अपने देवीत्व की प्रत्यभिज्ञा हो गयी थी, ने स्वयं अपनी विराट शक्ति की अभ्यर्थना की। ऊँ अहं रुद्रेभिर्वसु भिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।

अहं मित्रावरुणोभाविभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा।....–।।

यह वस्तुतः ब्रह्माण्डीय स्त्री शक्ति की सर्वोत्तम स्वीकारोक्ति है। यह उसके निज की शक्ति का अभिमान है। वह परम विदुषी है। उत्तम पुरुष में अभिव्यक्त ये ऋचाएँ वेद कालीन स्त्रियों की स्वतंत्रता और सामाजिक सम्मान को प्रतिध्वनित करती हैं। विश्व के किसी भी तत्कालीन साहित्य में स्त्री सम्मान की ऐसी दूसरी अभिव्यक्ति नहीं मिलती। यह नारी का नारी शक्ति का प्रत्यक्षीकरण माना जा सकता है।

धीरे धीरे वेदों का अध्ययन करने पर समाज में नारी की बढ़ती हुई भूमिका का ज्ञान होता है, जो पुजारी तक बनती है, यज्ञ सम्पन्न कराती है। ऐसे अनेक उदारण हैं पर कुछ ही आगे बढ़कर वैदिक युग के अन्तिम पौराणिक साहित्य में बढ़ते हुए ज्ञान बोध की ओर ईंगित करता है वह प्रसंग ज राजा जनक के दरबार की विद्वत्सभा

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

में मुनि याज्ञवल्क्य से विदुषी गार्गी ने आत्मा क्या है और ईश्वर क्या है जैसे प्रश्नों से पूर्ण सभा मे उपस्थित धर्म प्रेमी जन समुदाय को चकित कर दिया था। विवेकानन्द कहते हैं कि संभवतः इन्हीं प्रश्नों से आत्मा और ईश्वर की खोज आरम्भ हुई। हालंकि यह धारणा पूर्णतः विश्वसनीय नहीं भी हो सकती। अगर यह सत्य है तो ये प्रश्न एक स्त्री द्वारा सर्वप्रथम उठाए गये, यह बात महत्वपूर्ण है और उन लोगों को मूक कर देने के लिए पर्याप्त है जो तत्कालीन भारतीय स्त्रियों को पराश्रित और अज्ञानी मान रहे थे। वस्तुतः स्वतंत्र चिंतन की छूट उन्हें आर्य सभ्यता के प्रारंभ से ही मिली। हर क्षेत्र में वह अपने को अतुलनीय सिद्ध करती थीं यहाँ तक कि युद्ध कौशल भी वे प्राप्त कर सकती थीं वे शक्तिहीना तो कदापि नहीं थीं। स्त्री स्वातंत्र्य ही वर्तमान युग में उनके सशक्त होने की गर पहचान है तो आर्य सभ्यता का वह युग आरम्भ से ही हर क्षेत्र में उन्हें स्वतंत्र मानता था।

वेद काल और उत्तरवेदकाल में समाज में स्त्रियों का वर्चस्व था, उनकी इच्छाओं का दमन नहीं किया जा सकता था, यह स्वयंवर परम्परा से किंचित अवश्य स्पष्ट होता है। हालाकि स्वयंवर परम्परा के कारक तत्व के रूप में राजाओं के आत्माभिमान और राजनीति का घोर सम्बन्ध था, तब भी स्त्रियों के अधिकार की रक्षा भी एक कारक विषय था। तभी आत्माभिमान की रक्षा के लिए अम्बा ने दो जन्म की लड़ाई लड़ी थी।

उपरोक्त विषय जनित स्वतंत्रता स्त्री स्वातंत्र्य का एक निर्णायक तत्व है जिसके आधार पर विश्व में उसकी विकसित अथवा अविकसित स्थिति को मापा जा रहा था। उसे पराधीन समझा जा रहा था। यह सच है कि स्वयंवर की परम्परा उस काल में भी पूरे समाज में अथवा जन साधारण में प्रचलित नहीं थी पर उसके पीछे जो गहरी सोच थी उसका परिवार समाज और राष्ट्र की दृष्टि से काफी महत्व था। जन्मदातृ माता पिता की भूमिका बढ़ती गयी, उन्होने जन्मकाल के ग्रह नक्षत्रों की स्थिति देखकर योग्य वर ढूँढ़ना अपना कर्तव्य समझा। ब्राह्मणों और ज्योतिषियों की भूमिका बढ़ गयी। उनका तर्क अकाट्य था कि अगर उनकी इस भूमिका को प्राधान्य नहीं मिला तो पुरुष स्त्री सौन्दर्य ही आकर्षण का कारण बनेगा,और इस प्रकार का विवाह परिवार और कुल के लिए हानिकारक होगा। राजा शान्तनु का मत्स्यगंधा प्रेम ही कौरव कुल के विनाश का कारण क्या नहीं बना, यह कौन कह सकता है! इस सोच का विश्व के किसी अन्य समाज में कोई स्थान संभवतः नहीं था। अतः इसे भारतीय समाज की सोच का पिछड़ापन नही एक विशिष्टता ही मानी जानी जा सकती है पर जिसे आज प्रगतिशीलता की दृष्टि से अत्याधुनिक परिवारों द्वारा नकारा जाने लगा है। स्वयंवर की प्रथा का उल्लेख रामायण में सीता स्वयंवर के रूप में है, जो सशर्त है, ठीक ऐसा ही महाभारतकाल में द्रौपदी के साथ हुआ। राजपूत राजाओं के काल में संयुक्ता स्वयंवर और संयुक्ता का सभी राजाओं को इन्कार कर पृथ्वीराज चौहान का वरण करना अपने अधिकार के प्रति जागरुकता का प्रमाण था।

उन्होंने इस ओर भी संकेतित किया कि मनु संहिता को स्त्रियों के अधिकारों के प्रति अधिक कृपण माना गया है। हो सकता है कुछ अंशों में कहीं कहीं ऐसा संदेश मिलता हो पर उसी दौरान विभिन्न चिंतकों में कुछ ऐसे भी रहे जिन्होंने स्त्रियों को ब्राह्मणों के समान संपूज्य माना और उसे दबाना, घर में अलक्ष्मी के आह्वान के सदृश ही माना। उन्हे पहले वेदपाठ की छूट नहीं थी पर बाद मे वे भी वैदिक साहित्य पढ़ने की अधिकारिणी मान ली गयीं।

वे पुनर्विवाह भी कर सकती थीं। विधवा विवाह की भी उन्हें अनुमति थी। पर स्त्रियों के मन की स्वयं की पवित्रता की भावना की रक्षा थी कि वे विधवा विवाह नहीं करती थीं। धीरे धीरे यह विचार सामाजिक विचार बनता चला गया। कालान्तर में यही भावना परिपक्व होती चली गयी और मुगल काल में राजपूत स्त्रियों के जौहर के रूप मे परिणत हो गयी।

कुल मिलाकर नारी अस्मिता से सम्बद्ध सारे स्वरूप वैदिक और उत्तर वैदिक काल में प्राप्त हो रहे हैं। उसका स्वातंत्र्य कभी नियमतः नष्ट नहीं हुआ। एक गृहिणी के रूप मेवह सदैव गृह शासिका रही। उसका मातृ स्वरूप सदैव पूजनीय रहा। अगर उसपर कभी प्रहार हुआ तो पुरुष की शारीरिक शक्ति के परिणाम स्वरूप अथवा नैतिक मापदण्डों के विरुद्ध आचरण करने पर ही। इस प्रकार तो पुरुष भी दंडनीय होते थे।

वाह्य लोलुप जातियां भी उनकी मर्यादा हनन के कारण बनती रही। मध्यकाल मे,जब मध्यदेशों का प्रभाव एक आक्रमणकारी के रूप में अन्य सभ्यताओं को नष्ट भ्रष्ट करता हुआ बढ़ता गयातो वह स्त्रियों के स्वातंत्र्य में बाधक बना। उनके स्वतंत्र चिंतन पर अंकुश लगाता गया। वे घर की चारदीवारी में बन्द होती गयीं और मात्र एक ही चिन्ता जो अपने सम्मान और सतीत्व की रक्षा की थी, उनके जेहन में बसती चली गयी। आततताइयों से बचने के लिए उन्होंने अपने विचारों से भी समझौता किया और कभी कभी तो सुगमता से जीवन जीने के लिए उन्होंने अपने सम्मान से भी समझौता किया।

किन्तु निश्चय ही यह भारतीय स्त्रियों की वह विशेषता नहीं जो उसे विश्व के अन्य समुदायों से अलग

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

करती है। विवेकानन्द इस विषय पर बल देते हैं कि स्त्री मूलतः माता है और आर्य संस्कृति का वहन करनेवाली भारतीय स्त्रियों के सम्बन्ध में यह एक अनुभूत सत्य है। वह अपने भावरूप अस्तित्व में सदैव मातृस्वरूपा है। उसके अन्य सारे रूप इस मातृरूप के ही विविध प्रतिफलन हैं। इसी रूप में वह माता, पुत्री, बहन, पत्नी, सेविका और सबकुछ है। इसीलिये भारतीय समाज ने मातृरूप मे उसको सर्वाधिक महत्व दिया है। इसी रूप में वह गृहस्वामिनी बनने का अधिकार रखती है। इस रूप में उसको दी गई जिम्मेदारियां ही उसकी शक्ति संपन्न्ता को प्रमाणित करती हैं।

वे कहते हैं कि सम्पूर्ण आर्यन सभ्यता तीन तरह के वैचारिक स्वरूप को प्रतिपादित करती है और परिणामतः तीन प्रकार के सामुदायिक व्यवहारों को सम्पूर्ण आर्य जगत मे प्रकाशित करती है। उन्होंने इसे तीन प्रकार से देखा। एक तो रोमन दूसरा ग्रीक और तीसरा हिंदू ।

रोमन प्रकार में उसकी प्रथम विशेषता रचनात्मक और संगठनात्मक कार्यों मे उसकी रुचि, चढ़ाईयाँ करना विजित क्षेत्रों, जातियों से लूटपाट करना आदि। भाषा साहित्य आर्किटेक्चर म्यूजिक आदि के प्रति रुचि आदि दूसरी स्थैर्य और धैर्य की रही परतीसरी विशेषता में भावप्राधान्य की कमी को माना जा सकता है। वे अन्य जातियों के प्रति रुक्ष और संवेदनहीनता का परिचय देते रहे। ऐंग्लो सेक्सन समुदाय नेइसका प्रतिनिधित्व किया।

ग्रीक सभ्यता के रूप में दूसरी कोटि की आर्यन सभ्यता विकसित हुई जो भावुकता प्रधान थी। सौंदर्य के प्रति उनमे तीव्र आग्रह रहा किन्तु उसमें एक प्रकार के ओछेपन, निरर्थकता, अनैतिकता अथवा चरित्रहीनता की झलक मिलती है।

उनके अनुसार हिन्दू प्रकार की आर्यन शैली तत्ववादिता और धार्मिकता को प्राधान्य देती है पर उसमें संस्थागत संगठन और कार्यों के प्रति घोर उदासीनता रही है।

इस प्रकार इन तीन आर्यन शैलियों ने मिलकर एक सम्पूर्ण आर्यन शैली का स्वरूप प्रस्तुत किया जिसमें रोमन्स की संस्थागत शैली, ग्रीक की सौंन्दर्य प्रियता और हिन्दूशैली की धार्मिकता, ईश्वरीय प्रेम और जिज्ञासा सन्निहित थी। इन तीनों को मिलाकर ही सम्पूर्ण आर्यन शैली एक विशिष्ट शैली बनती है और वर्तमान संदर्भ में उसी की आवश्यकता भी है। विवेकानन्द ने तभी कहा कि इन तीनों का सम्मिश्रण स्त्रियाँ ही प्रस्तुत कर सकती हैं। यह उन्हीं के हाथों मे है ।

युग बीत गये पर आज उनका यह कथन सार्थक प्रतीत हो रहा है। भारतीय स्त्रियां आज बहुत जागरुक हैं। सौन्दर्य दृष्टि की विशालता तो उनके पास है ही व्यवस्था, तार्किकता और अध्यात्मिक सोच के प्रति जागरुकता उन्हें इस विशिष्ट शैली में निरंतर दीक्षित करती प्रतीत हो रही हैं। वे तत्सम्बन्धित हर प्रकार की बाधाओं को पार करने के लिए निरंतर संघर्षरत हो रही दिखती हैं। उन तीनों आर्यन शैली की विशिष्टताओं को वे अपनी जीवन शैली में समाहित करना चाहती हैं। इसके लिए जिस निर्भीकता की आवश्यता है वह उनमें आ रही है। अधिकारों की लड़ाई, पुरुष समानता की लड़ाई आदि उसी सभ्यता की ओर बढ़ते हुए कदम हैं। दृष्टि में वैज्ञानिकता है। प्रकृति के अनखुले, अनसुलझे रहस्यों को खोलने और सुलझाने में सारी इन्द्रियों से वे अपना योगदान करना चाहती हैं। ज्ञान उनकी मुट्ठियों में आ रहा है और किसी भी क्षण विकास के उच्चतम शिखर तक पहुंचने में सक्षम मान ली जाएंगी।

स्वामी विवेकानन्द के हवाले से जो बातें यहां कही गयी हैं वह वस्तुतः आज का भी बौद्धिक सत्य है। आज के सत्य को उनके कथन एक अग्रचेता के कथन बन पूर्व प्रमाणित करते हुए प्रतीत होते हैं और तब उनकी दृष्टि हम सब युगचेताओं की दृष्टि से अभिन्न हो जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भक्ति योग
2. कर्म योग
3. राज योग
4. Swami VivekaNand on Himself
5. Teachings of Swami Vivekanand

*****